त्रिलोकस्थितजिनगृहस्तव

सं. मुनि कल्याणकीर्तिविजय

अपभ्रंशभाषामय आ स्तवमां त्रणेय लोकमां रहेल शाश्वत चैत्यो तथा तिच्र्छा लोकमां रहेला आशाश्वत चैत्योंनी स्तवना करेल छे । तेमां प्रथम आठ कडीओमां ऊर्ध्वलोकस्थित जिनचैत्योंनी गणनापूर्वक स्तुति करी छे । नवमा पद्यमां भवनपति-व्यंतरज्योतिषीओना निवासोमां रहेला जिनचैत्योंनी स्तवना करी छे । दशमा पद्यमां तिर्यग्लोकस्थित शाश्वत चैत्योने वंदना करी छे । ११-१२ पद्यमां भरतक्षेत्रमां रहेल आशाश्वत चैत्योनी स्तवना करी छे ।

पुष्पिकामां 'इति सास्वता' एवुं लख्युं छे ते उपरथी 'सास्वता-असास्वता चैत्यवंदना' एवुं आ स्तवनुं नाम संभवी शके छे, छतां प्रथम पद्यनी त्रीजी पंक्तिमां दर्शाव्या प्रमाणे आ स्तवनुं नाम त्रिलोकस्थितजिनगृहस्तव एवुं राख्युं छे ।

आ स्तवनी प्रथम आठ कडीओ २० मात्राना चतुष्पदी स्रग्विणी छंदमां रचायेली छे । पद्य ९ थी १२-ते १६ मात्राना जगणांत चतुष्पदी पद्धडिया / पज्झटिका छंदमां रचायेली छे । अने छेल्लुं पद्य ३२ मात्राना द्विपदी घत्ता छंदमां रचायेल छे जेमां यति १०-८-१४ मात्रा पर थाय छे ।

प्रस्तुत स्तवना कर्ता मुनि रविसिंह होय तेवुं अंतिम पद्यना प्रथम चरणमां करायेला निर्देशथी जणाय छे ।

प्रतिनुं लेखन वि.सं. १६६७ ना चैत्र सुदि १३ना दिने थयुं छे । लेखनकर्ता आगमगच्छना आचार्य कुशलवर्धनसूरिनी परंपरामां थयेल आचार्य कुलवर्धनसूरिना शिष्य ऋषि विद्यावर्धन छे तेवुं प्रतिना अंते लखायेल पुष्पिकाथी जणाय छे ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

त्रिलोकस्थितजिनगृहस्तव

॥ श्रीकुशलवर्द्धनसूरिगुरुभ्यो नमः ॥

असुरसुरखयरनरनमियपयपंकयं
नमिवि रिसहेसरं भवियकयसुक्कयं ।
भणीसु तिलोयठियजिणहराणं थयं
जेम मे जाइ बहुपुव्वभवदुक्कयं ॥१॥

बत्तीसलक्खा य सोहंमि(म)कप्पे वरे
इसाणि अडवीसई लक्ख जिणमंदिरे ।
सणंतकुमारि[ए] बारसयसहसया
लक्ख माहिंदे अट्ठेव वंदे सया ॥२॥

बंभलोगंमि चत्तारि लक्खा वरा
जत्थ पूयंति भत्तीइ विबुहेसरा ।
सहसपन्नास वंदामि लंतग(गा)भिहे
सुक्कि चालीससहसा य जिणहर महे ॥३॥

अठमे कप्पि सहसारि जिण संथुणे
छच्च सहसु(स्सु) वंदामि जिणभूयणे ।
आणए नवमि कप्पंमि तह पाणए
दसमिए (दसमि) दुन्नि दुन्नि पणमामि चेइ(ई)सए ॥४॥

आरणे दिवड्ढसय कप्पि एगारसे
अच्चूए कप्पि सउ दिवड्ढ तह बारसे ।
पढमि गेविज्जि तिगि इगारअहियं सयं
बीयतिगि एगसयसत्तहिय चंगयं ॥५॥

एगसयसोहियं अत्थि तईयं तिगं
नवमि गेविज्जि अट्ठारहिय-सयतिगं ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विजयवेजयंतजयंतअवराजियं
सव्वट्ठसिद्धि पवरजिवेहिं(वहि) वियराईयं (विराइयं) ॥६॥
पंचणुत्तेरविमाणेसु जिणमंदिरं
एगमेगं नमंसामि अइसुंदरं ।
लक्खचुलसी य सहसा य सत्ताणुई
सव्वविमाण जिणभवण तेवीसई ॥७॥

इत्तियं सव्वसंखाय परिभासियं
उड्ढलोयंमि जिणवरिहिं सुपयासियं ।
भवणवइमज्झि चेईहरे सुंदरे
नमिसु रोमंचभरि भरीय जोडी करे ॥८॥

सत्तेव कोडि बावत्तरीय
लक्खा भवसायर-सत्तरीय ।
वंतरवरजोइसी(सि)एसु दक्ख
पभणउं जिणमंदिर नत्थि संख ॥९॥

कुंडलि रुयगेसु वि माणुसंमि
नंदीसरि वेयड्ढि सुरगिरिंमि ।
हिमवंत-सिहरि-निसढाईएसु
रिसहाइपडिमासोहीएसु ॥१०॥

सत्तुंजि गिरी(रि) सिरिउज्जयंति
साचुरि वीर नमुं कणयकंति ।
संखेसरि करहेडइ पुरंमि
थंभणइ पासु जालउरि रंमि ॥११॥

अट्ठावय-गिरिवरि आबुयंमि
समेहसिहरि भरुयच्छि रंमि ।
इय सासय-असासयचेईएसु
तित्थेसर पणमिसु मणहरेसु ॥१२॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इय संथुय सामी सिवपुरगामी
रविसिंहइं पणमीय(मिय) चलण ।
लद्धइ मणुअत्तणि समरित नी(नि)यमणि
जिम जीय छुट्टइ भवभमण ॥१३॥

॥ इति सास्वता ॥ संवत् १६६७ वर्षे चैत्र सुदि १३ दिन आगमगच्छे भट्टारक श्री श्री २१ श्रीकुलवर्धनसूरि-तत् शिष्य-ऋषिश्रीविद्यावर्धनेन लखितं वाच्यमाना चिरं नन्दतु ॥

॥ श्रीशुभं तीर्थात् श्री ॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org